International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
e-ISSN :2581-9925, Impact Factor (Cosmos: 7.555 & I2OR: 5.105), Volume 08, No. 01(II), January - March, 2026, pp. 214-217

जयपुर की सांस्कृतिक पहचान 'जीमण परंपरा': एक सामाजिक अध्ययन

वन्दना भारद्वाज[1*] | डॉ. शिल्पी गुप्ता[2]

[1]शोधार्थी, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, वनस्थली विद्यापीठ।
[2]विभागाध्यक्ष एवं एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, वनस्थली विद्यापीठ।

*Corresponding Author: vandna.pragati80@gmail.com

Citation: भारद्वाज, वन्दना एवं गुप्ता, शिल्पी (2026). जयपुर की सांस्कृतिक पहचान 'जीमण परंपरा': एक सामाजिक अध्ययन. International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science, 08(01(II)), 214–217. https://doi.org/10.62823/IJEMMASSS/8.1(II).8791

सार

जयपुर की सांस्कृतिक पहचान बहुआयामी है, जिसमें 'जीमण परंपरा' एक महत्वपूर्ण सामाजिक सांस्कृतिक घटक के रूप में उभरकर सामने आती है। यह अध्ययन जयपुर की जीमण परंपरा के ऐतिहासिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पक्षों का विश्लेषण करता है। जीमण परंपरा के वह सामूहिक भोजन की व्यवस्था नहीं, बल्कि सामाजिक समरसता, सहयोग, समानता और सांस्कृतिक निरंतरता का सशक्त माध्यम रही हैं। वैदिक कालीन 'अतिथि देवो भवः' की अवधारणा से प्रेरित यह परंपरा मध्यकालीन राजपूत समाज में विकसित हुई और धीरे–धीरे लोकजीवन का अभिन्न अंग बन गई।

शब्दकोशः *जीमण परंपरा, सामाजिक समरसता, सामूहिक भोजन, सांस्कृतिक निरंतरता, पंगत व्यवस्था, अतिथि सत्कार।*

प्रस्तावना

जयपुर भारतीय सांस्कृतिक परम्पराओं का एक प्रमुख केन्द्र है, जहाँ सामाजिक जीवन और सांस्कृतिक व्यवहारों में गहरी निरंतरता परिलक्षित होती है। इस नगर की स्थापना सवाई जयसिंह द्वितीय द्वारा 1727 ईस्वी में की गई, किन्तु इसकी पहचान केवल स्थापत्य या प्रशासनिक दृष्टि तक सीमित नहीं है। यहाँ की जीवंत परंपराएँ, विशेषकर 'जीमण परंपरा' समाज की संरचना और सांस्कृतिक चेतना को समझने का सशक्त माध्यम प्रदान करती हैं। यह सामूहिक भोज की एक ऐसी प्रणाली है, जो सामाजिक समन्वय, सांस्कृतिक संप्रेषण और सामुदायिक संबंधों के पुनर्स्थापन का कार्य करती है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

'जीमण परंपरा' की मूल प्रेरणा वैदिक काल की 'अतिथि देवो भवः' तथा 'अन्नदान' की परंपराओं से प्राप्त होती है, जिन्हें मध्यकालीन राजपूत शासकों ने एक संगठित स्वरूप प्रदान किया। विवाह, यज्ञ, कथा, त्योहार और अन्य सामाजिक अवसर पर 'सार्वजनिक भोज' आयोजित किया जाता था। जेम्स टॉड ने उल्लेख किया है कि राजपूताना में सामूहिक भोज सामाजिक एकता और सम्मान का महत्त्वपूर्ण माध्यम थे। दरबारों में 'पगंत व्यवस्था' के अंतर्गत सभी व्यक्ति एक पंक्ति में बैठकर भोजन करते थे, जो सामाजिक समानता का प्रतीक था।[1] यह परम्परा धीरे–धीरे लोकजीवन में सामहित हो गई और समाज के विभिन्न वर्गों में प्रचलित हो गई।

* *Copyright © 2026 by Author's and Licensed by Inspira. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution License which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work properly cited.*

पारम्परिक जीमण परंपरा का स्वरूप

जीमण परंपरा का स्वरूप अत्यंत व्यवस्थित और सांस्कृतिक दृष्टि से अर्थपूर्ण है। इसमें पंगत में बैठना, भोजन का क्रमबद्ध परोसना और अतिथि सत्कार के विशेष नियम शामिल होते हैं। वी.एस. भार्गव के अनुसार, जयपुर की खाद्य परंपराएँ उसकी सांस्कृतिक पहचान का अभिन्न अंग है।[2] सार्वजनिक भोज के आयोजन पर शहर के घरों में चूल्हा नहीं जलता था और सड़क पर कनातें गाड़कर जीमण होता था। इस भोज की सूचना ढोल बजाकर दी जाती थी। माधोसिंह रोजाना ग्यारह सौ ब्राह्मणों को भोजन करवाते थे। गणेश चतुर्थी के बाद गलता तीर्थ में गोठ होती थी। माधोसिंह हरिद्वार से आते, तब भोज करवाते थे। भोज में पुरसगारी करने वाले दो लांग की धोती, कमरबंधा, कसी हुई अंगरखी, माथे पर पगड़ी और कानों में सोने की मुरकी पहनते थे। सबसे पहले वे चौंगनी के लड्डू और बाद में कैरी की लूंजी, दाणामेथी की सब्जी, घोल की नुक्ति और गरम कचौरी रखते थे। घड़े में छेद कर ओक से जल पिलाया जाता था। महिलायें पुरसगारे की धोती को पकड़ कर कहती **'अरे भाया सुणो, दो लाडू म्हानें भी पुरस द्यो।'** जीमने के बाद महिलाएं दो चार लड्डू बच्चों को खिलाने के नाम पर अधिकार पूर्वक ले जाती थीं। अल्बर्ट हॉल की नींव लगाने पर बड़ा जीमण हुआ। माधोसिंह की मृत्यु के बाद पूरे शहर को भोज कराया गया।[3] उन दिनों जीमण में लड्डू, कचौरी और मक्खन बड़ों की महक छायी रहती थी। माधोसिंह के राज में 42 सालों तक जीमण का सिलसिला परवान चढ़ा रहा। महारानी जादौनजी की स्मृति में छह दिन तक सार्वजनिक भोज का आयोजन किया गया था, जिसमें सातों जात के लोगों को गलियों में ढोल बजाकर निमंत्रित किया गया। जलेब चौक, सिटी पैलेस का सरबता, हवामहल व आतिश के मैदान में हुए हजारों लोगों की ज्यौणार हुई।[4]

उन दिनों सम्पन्न लोग बिरादारी और व्यवहारियों को सार्वजनिक भोज में जिमाना प्रतिष्ठा का सूचक मानते थे। जीमण के लिए महाराजा से इजाजत लेनी पड़ती थी। भुजिए, दाणा मेथी की सब्जी, टिपोरे, कचौरी व नुक्ति का रायता आदि तैयार करने में दर्जनों हलवाई दिन–रात लगे रहते थे। चालीस के दशक में निमंत्रण पत्र में जीमने वालों की संख्या भी लिखी जाने लगी, जैसे एक आसामी, दो आसामी, सिगर्यों और चूल्हा उपाड़ न्योता दिया जाता था। सिगर्या में पूरा परिवार और चूल्हा उपाड़ में घर आए मेहमान को भी ले जा सकते थे।[5] जयपुर में जीमण की पूरी प्रक्रिया अत्यन्त सुव्यवस्थित होती थी। भोजन प्रायः खुले चौक, आँगन या विशेष रूप से बनाए गए स्थलों पर तैयार किया जाता था, जहाँ बड़े–बड़े कड़ाहों में शुद्ध घी के व्यंजन बनाये जाते थे। पत्तल और दोने जैसे प्राकृतिक बर्तनों का उपयोग होता था, जो पर्यावरण के अनुकूल थे। जीमण में बैठने की व्यवस्था 'पंगत' के रूप में होती थी, जिसमें सभी लोग एक सीध में, बिना किसी भेदभाव के बैठते थे। यह व्यवस्था जाति, वर्ग और आर्थिक स्थिति के अंतर को कम करने का एक सामाजिक माध्यम भी थी। भोजन परोसने की शैली भी इस परंपरा का महत्त्वपूर्ण भाग थी। भोजन परोसने वाले अत्यंत विनम्रता और आग्रह के साथ बार–बार भोजन परोसते थे, जो सेवा ओर सम्मान की भावना को व्यक्त करता था। आरम्भ में मीठा (हलवा, लापसी, खीर, कलाकंद, मक्खन बड़े, मोतीपाक) फिर पूड़ी, सब्जी, नमकीन और अंत में छाछ परोसी जाती थी।[6]

चित्र संख्या–1 जीमण परंपरा

(स्रोतः शोधार्थी द्वारा)

गोपीनाथ शर्मा के अनुसार, यह परंपरा सामूहिक श्रम, सहभागिता और सामाजिक संबंधों के सुदृढ़ीकरण को भी प्रोत्साहित करती है।[7] यह परंपरा सांस्कृतिक निरंतरता को बनाये रखने का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम हैं। यह परंपरा पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती है, जिसके माध्यम से रीति–रिवाज और सांस्कृतिक मूल्य संरक्षित रहते है। कपिला वात्स्यायन के अनुसार, भारतीय परंपराएँ अपने व्यवहारिक रूपों के माध्यम से निरंतर पुनरूत्पादित होती रहती हैं।[8]

आधुनिक परिप्रेक्ष्य

आज भी जीमण परंपरा मूल भावना के साथ जीवित है, भले ही स्वरूप में परिवर्तन आ गए हों। जहाँ पहले लोग पंगत में बैठकर पत्तल पर भोजन करते थे, वहीं आज शहरी क्षेत्रों में बुफे सिस्टम (टेबल–चेयर पर बैठकर खाना) और आधुनिक व्यवस्थाएँ देखने को मिलती हैं, लेकिन अतिथि–सत्कार, सेवाभाव और सामूहिकता की भावना आज भी उतनी ही मजबूत है। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों और पारंपरिक परिवारों में पंगत व्यवस्था अब भी प्रचलित है, जहाँ सभी लोग एक साथ बैठकर भोजन करते हैं। इसके अलावा आज जीमण की भावना सामाजिक सेवा के नये रूपों जैसे गरीबों को भोजन कराना, लंगर, भंडारा आदि में भी दिखाई देती है।[9]

हाल ही में 110 साल पुरानी परम्परा (वह परम्परा, जिसके अन्तर्गत राजा–महाराजा द्वारा किसी विशेष अवसर पर जनता के लिए सामूहिक भोजन–ज्योणार का आयोजन किया जाता था।) के अन्तर्गत 13 जुलाई 2025 को ऐतिहासिक 'ज्योणार' (सामूहिक गोठ) का कार्यक्रम, जयपुर की मेयर कुसुम यादव की अगुवाई में, सांगानेरी गेट स्थित अग्रवाल कॉलेज में आयोजित किया गया। जिसमें राजस्थानी पारम्परिक व्यंजन, दाल–बाटी–चूरमा लगभग 50 हजार लोगों को पंगत में परोस कर खिलाया गया।[16] कार्यक्रम संयोजक कैलाश मित्तल के अनुसार 'ज्योणार' के लिए तीन दिन तक लगातार 500 हलवाईयों ने भोजन तैयार किया। पारम्परिक भोजन के लिए 12 हजार 500 किलो आटा–बेसन, 1500 किलो दाल, 1200 किलो मावा, 160 पीपे देसी गाय का घी और अन्य मसाले इस्तेमाल किए गए।[10]

इस प्रकार, आधुनिकता के बावजूद जीमण परंपरा ने अपने मूल्य समानता, सेवा ओर संस्कृति को बनाए रखते हुए जयपुर की सांस्कृतिक पहचान का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बनी हुई है। यह परंपरा न केवल अतीत की विरासत है, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए भी सामाजिक एकता का आधार भी प्रदान करती है। इसके माध्यम से सभी लोग एक जगह पर शामिल होते हैं, आपस में परस्पर मेलजोल होता है, व्यस्त जिन्दगी के बावजूद भी एक दूसरे की कुशलक्षेम पूछ लेते हैं अतः इस तरह की गोठ, जीमण परम्परा तब से लेकर आज तक समाज की एक आवश्यकता है, जो सिर्फ खानपान की शौकीन प्रवृति, परम्परा को ही नहीं दर्शाती अपितु लोगों के बीच समाज में एक सामंजस्य, समरसता को बढ़ावा देती है, जो यहाँ के लोगों में एक सुदृढ़ सम्बन्ध, सामाजिक जीवन में ऐक्य को बढ़ावा देता है एवं सदियों से जयपुंर की जीमण परम्परा यहाँ की प्रसिद्ध सांस्कृतिक पहचान भी है।

निष्कर्ष

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जीमण परंपरा जयपुर की सांस्कृतिक संरचना का एक केन्द्रीय तत्व है, जो ऐतिहासिक निरंतरता और सामाजिक गतिशीलता के मध्य एक सेतु का कार्य करती है। यह परंपरा केवल एक सांस्कृतिक अनुष्ठान नहीं वरन सामाजिक संगठन, सामूहिक चेतना और मानवीय मूल्यों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम रही है। विशेष रूप से, इस परंपरा ने सामाजिक समावेशन, समानता एवं पारस्परिक सहयोग की भावना को सुदृढ़ किया, जिससे समाज में सांस्कृतिक एकात्मता का विकास हुआ। यद्यपि आधुनिकता, नगरीकरण एवं उपभोक्तावादी प्रवृत्तियों के प्रभाव से इसके स्वरूप में परिवर्तन परिलक्षित होते हैं, तथापि इसकी मूल आत्मा 'सहयोज के माध्यम से सामाजिक एकता का संवर्धन' आज भी प्रासांगिक बनी हुई है। अतः आवश्यक है कि इसे समकालीन समाज में सामाजिक सद्भाव, समावेशिता और सांस्कृतिक संरक्षण के एक सशक्त मूल्यों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम रही है। विशेष रूप से, इस परंपरा ने सामाजिक समावेशन, समानता एवं पारस्परिक

सहयोग की भावना को सुदृढ़ किया, जिससे समाज में सांस्कृतिक एकात्मता का विकास हुआ। यद्यपि आधुनिकता, नगरीकरण एवं उपभोक्तावादी प्रवृत्तियों के प्रभाव से इसके स्वरूप में परिवर्तन परिलक्षित होते हैं, तथापि इसकी मूल आत्मा 'सहयोज के माध्यम से सामाजिक एकता का संवर्धन' आज भी प्रासांगिक बनी हुई है। अतः आवश्यक है कि इसे समकालीन समाज में सामाजिक सद्भाव, समावेशिता और सांस्कृतिक संरक्षण के एक सशक्त माध्यम के रूप में पुर्नस्थापित किया जाए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. टॉड, कर्नल जेम्स. (1920). *एनाल्स एण्ड एण्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान*, भाग–1, लंदनः ऑक्सफॉर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 310–320.
2. भार्गव, वी एस. (2006). जयपुरः इट्स हिस्ट्री एंड क्लचर, जयपुरः पब्लिकेशन स्कीम, पृ. 202–205
3. शेखावत जितेन्द्र सिंह, (2022). *म्हारो जयपुर न्यारो जयपुर*, जयपुरः पत्रिका प्रकाशन. पृ. 277.
4. *म्हारो जयपुर न्यारो जयपुर*, पूर्वोक्त, पृ. पत्रिका प्रकाशन. पृ. 278.
5. लाभशंकर त्रिवेदी (स्थानीय निवासी) से प्राप्त जानकारी के आधार पर, दिनांक 03.01.2026.
6. जितेन्द्र कुमार गोयल, (हलवाई, 85 वर्ष) से साक्षात्कार, 21–02–2026.
7. शर्मा, गोपीनाथ. (2010). राजस्थान का इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुरः पृ. 245–250.
8. वात्स्यायन, कपिला. (2007). ट्रेडीशनल इंडिया कल्चर, नई दिल्लीः इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, पृ. 95.
9. स्वयं के सर्वेक्षण के आधार पर, दिनांक 03.03.2026.
10. 'जयपुर की ज्योणार' 12 जुलाई 2025, राजस्थान पत्रिका, पृ.7.

❑❑❑